आस्रव त्रिभंगी

अनुक्रमणिका

001) मंगलाचरण
001) आस्रव के भेद
003) मिथ्यात्व का लक्षण एवं भेद
003) अविरति का लक्षण एवं भेद
005-006) कषाय के भेद
005-006) योग के भेद
009) गुणस्थानों में आस्रव
009) गुणस्थानों में विशेष आस्रव
011) गुणस्थानों में आस्रव व्युच्छित्ति
011) गुणस्थान में नहीं होने वाले आस्रव
015) गुणस्थानों में व्युच्छिन्न आस्रव
015) गुणस्थानों में आस्रव की संख्या
021) गुणस्थानों में अनास्रवों की संख्या
021) गुणस्थानों में योग
023) गुणस्थानों में कषाय
023) मार्गणा में आस्रव
025) पर्याप्त-अपर्याप्त के आस्रव
025) नरकगति में आस्रव
029) तिर्यंचगति के आस्रव
029) मनुष्यगति के आस्रव
032) देवगति के आस्रव
032) इंद्रिय मार्गणा, कायमार्गणा
039) योग मार्गणा
039) संयम मार्गणा
055) दर्शन मार्गणा एवं लेश्या मार्गणा
055) भव्य मार्गणा
058) सम्यक्त्व मार्गणा
058) संज्ञी मार्गणा
060) आहारक मार्गणा

!! श्रीसर्वज्ञवीतरागाय नम: !!
श्रीमद्-श्रुतमुनिदेव-प्रणीत
श्री
प्रवचनसार
मूल प्राकृत गाथा का हिंदी अनुवाद सहित
आभार :
!! नम: श्रीसर्वज्ञवीतरागाय !!
ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नम: ॥1॥
अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलकलंका
मुनिभिरूपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितान् ॥2॥
अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नम: ॥3॥

अर्थ : बिन्दुसहित ॐकार को योगीजन सर्वदा ध्याते हैं, मनोवाँछित वस्तु को देने वाले और मोक्ष को देने वाले ॐकार को बार बार नमस्कार हो । निरंतर दिव्य-ध्वनि-रूपी मेघ-समूह संसार के समस्त पापरूपी मैल को धोनेवाली है मुनियों द्वारा उपासित भवसागर से तिरानेवाली ऐसी जिनवाणी हमारे पापों को नष्ट करो । जिसने अज्ञान-रूपी अंधेरे से अंधे हुये जीवों के नेत्र ज्ञानरूपी अंजन की सलाई से खोल दिये हैं, उस श्री गुरु को नमस्कार हो । परम गुरु को नमस्कार हो, परम्परागत आचार्य गुरु को नमस्कार हो ।

॥ श्रीपरमगुरुवे नम:, परम्पराचार्यगुरुवे नम: ॥

सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमन: प्रतिबोधकारकं, पुण्यप्रकाशकं, पापप्रणाशकमिदं शास्त्रं श्री-आस्रव-त्रिभंगी नामधेयं, अस्य मूल-ग्रन्थकर्तार: श्री-सर्वज्ञ-देवास्तदुत्तर-ग्रन्थ-कर्तार: श्री-गणधर-देवा: प्रति-गणधर-देवास्तेषां वचनानुसार-मासाद्य श्री-श्रुतमुनि-देव विरचितं ॥

(समस्त पापों का नाश करनेवाला, कल्याणों का बढ़ानेवाला, धर्म से सम्बन्ध रखनेवाला, भव्यजीवों के मन को प्रतिबुद्ध-सचेत करनेवाला यह शास्त्र आस्रव-त्रिभंगी नाम का है, मूल-ग्रन्थ के रचयिता सर्वज्ञ-देव हैं, उनके बाद ग्रन्थ को गूंथनेवाले गणधर-देव हैं, प्रति-गणधर देव हैं उनके वचनों के अनुसार लेकर आचार्य श्रीश्रुतमुनिदेव द्वारा रचित यह ग्रन्थ है । सभी श्रोता पूर्ण सावधानी पूर्वक सुनें ।)

॥ श्रोतार: सावधानतया शृणवन्तु ॥
मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥
सर्वमंगलमांगल्यं सर्वकल्याणकारकं
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम् ॥
आर्हत भक्ति
पण्डित-जुगल-किशोर कृत
वीर-हिमाचल तें निकसी, गुरु-गौतम के मुख-कुण्ड ढरी है ।
मोह-महाचल भेद चली, जग की जड़ता-तप दूर करी है ॥१॥
ज्ञान-पयोनिधि माँहि रली, बहुभंग-तरंगनि सौं उछरी है ।
ता शुचि-शारद गंगनदी प्रति, मैं अंजलि करि शीश धरी है ॥२॥
या जग-मन्दिर में अनिवार, अज्ञान-अंधेर छ्यौ अति भारी ।
श्रीजिन की धुनि दीपशिखा-सम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥३॥

तो किस भांति पदारथ-पाँति, कहाँ लहते? रहते अविचारी ।
या विधि सन्त कहैं धनि हैं, धनि हैं, जिन-बैन बड़े उपकारी ॥४॥

मंगलाचरण

पणमिय सुरेंदपूजियपयकमलं वड्ढमाणममलगुणं ।
पच्चयसत्तावण्णं वोच्छे हं सुणह भवियजणा ॥१॥

अन्वयार्थ : सुरेन्द्र से पूजित हैं चरण कमल जिनके, ऐसे अमल गुणों से सहित श्री वर्द्धमान जिनेन्द्र को नमस्कार करके आस्रव के कारणभूत सत्तावन भेदों को मैं कहूँगा । हे भव्यजीवों! तुम उन्हें सावधानचित्त होकर सुनो ॥१॥

आस्रव के भेद

मिच्छत्तं अविरमणं कसाय जोगा य आसवा होंति ।
पण बारस पणवीसा पण्णरसा होंति तब्भेया ॥२॥

अन्वयार्थ : मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ये आस्रव कहलाते हैं । ये आस्रव के लिए कारणभूत हैं अत: इन्हें आस्रव कह देते हैं । इनके उत्तर भेद क्रम से मिथ्यात्व के पाँच, अविरति के बारह, कषाय के पच्चीस और योग के पंद्रह भेद होते हैं ॥२॥

मिथ्यात्व का लक्षण एवं भेद

मिच्छोदयेण मिच्छत्तमसद्दहणं तु तच्चअत्थाणं ।
एयंतं विवरीयं विणयं संसयिदमण्णाणं ॥३॥

अन्वयार्थ : मिथ्यात्व के उदय से जो तत्वों का अश्रद्धान है वह मिथ्यात्व कहलाता है उसके ५ भेद हैं- एकांत, विपरीत, विनय, संशय और अज्ञान ॥३॥

अविरति का लक्षण एवं भेद

छिंस्सदिएसुऽविरदी छज्जीवे तह य अविरदी चेव ।
इंदियपाणासंजम दुदसं होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥४॥

अन्वयार्थ : पाँच इंद्रिय और मन इन छह इंद्रियों के विषयों से विरक्त नहीं होना और पाँच स्थावर एवं त्रस ऐसे षट्काय जीवों की विराधना से विरक्त नहीं होना अविरति है । इस प्रकार से इंद्रिय असंयम और प्राणी असंयम के भेद से अविरति के १२ भेद होते हैं ॥४॥

कषाय के भेद

अणमप्पच्चक्खाणं पच्चक्खाणं तहेव संजलणं ।
कोहो माणो माया लोहो सोलस कसायेदे ॥५॥

अन्वयार्थ : अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन इन चारों के क्रोध, मान, माया, लोभ के भेद से कषाय के १६ भेद होते हैं ॥५॥

एवं हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद ये नव नोकषायें मिलकर कषाय के २५ भेद होते हैं ॥६॥

योग के भेद

मणवयणाण पउत्ती सच्चासच्चुभयअणुभयत्थेसु ।
तण्णामं होदि तदा तेहिं दु जोगा हु तज्जोगा ॥७॥
ओरालं तंमिस्सं वेगुव्वं तस्स मिस्सयं होदि ।
आहारय तंमिस्सं कम्मइयं कायजोगेदे ॥८॥

अन्वयार्थ : सत्य, असत्य, उभय और अनुभय अर्थों में मन, वचन की प्रवृत्ति सत्य मन, सत्य वचन आदि नाम से कही जाती है । इन सत्य मन, असत्य मन की प्रवृत्तियों के निमित्त से जो आत्मा के प्रदेशों में हलन, चलन होता है वह योग कहलाता है अत: इन सत्यमन, वचन के योग से सत्य मनोयोग, असत्य मन, वचन के योग से असत्य मनोयोग आदि उन-उन नाम वाले योग कहलाते हैं । इनके नाम- सत्यमनोयोग, असत्य मनोयोग, उभय मनोयोग, अनुभय मनोयोग, सत्यवचन योग, असत्यवचन योग, उभयवचन योग, अनुभय वचन योग, ये मनोयोग, वचनयोग के आठ भेद हुये ॥७॥

औदारिक काययोग, औदारिकमिश्र काययोग, वैक्रियक काययोग, वैक्रियकमिश्र काययोग, आहारक काययोग, आहारकमिश्र काययोग और कार्मणयोग ये काययोग के ७ मिलकर योग के पंद्रह भेद होते हैं ॥८॥

गुणस्थानों में आस्रव

मिच्छे खलु मिच्छत्तं अविरमणं देससंजदो१ त्ति हवे ।

सुहुमो त्ति कसाया पुणु सजोगिपेरंत जोगा हु२ ॥९॥

अन्वयार्थ : मिथ्यात्व गुणस्थान तक मिथ्यात्व रहता है, देशसंयत गुणस्थान तक अविरति रहती है, सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान तक कषायें रहती हैं एवं सयोगकेवली पर्यंत योग रहते हैं ॥९॥

गुणस्थान में आस्रव के मूल-प्रत्यय गुणस्थान बंध-प्रत्यय मिथ्यात्व (5) अविरत (12) कषाय (25) योग (15) मिथ्यादृष्टि 4 □ □ □ □ सासादन 3 X □ □ □ सम्यग्मिथ्यादृष्टि 3 X □ □ □ असंयत सम्यग्दृष्टि 3 X □ □ □ संयतासंयत 3 X □ □ □ प्रमत्तसंयत 2 X X □ □ अप्रमत्तसंयत 2 X X □ □ अपूर्वकरण 2 X X □ □ अनिवृत्तिकरण 2 X X □ □ सूक्ष्मसाम्पराय 2 X X □ □ उपशान्त / क्षीण कषाय 1 X X X □ सयोग केवली 1 X X X □ गोम्मटसार कर्मकांड गाथा -- गाथा -- 786 से 788

गुणस्थानों में विशेष आस्रव

मिच्छदुगविरदठाणे मिस्सदुकम्मइयकायजोगा य ।

छट्ठे हारदु केवलिणाहे ओरालमिस्सकम्मइया ॥१०॥

अन्वयार्थ : मिथ्यात्व, सासादन और असंयत गुणस्थानों में औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कार्मण काययोग होते हैं । छठे गुणस्थान में आहारक, आहारकमिश्र योग होते हैं एवं केवली भगवान के औदारिक मिश्र और कार्मण योग होते हैं ॥१०॥

गुणस्थानों में आस्रव व्युच्छित्ति

पंच चदु सुण्ण सत्त य पण्णर दुग सुण्ण छक्क छक्केक्कं ।

सुण्णं चदु सगसंखा पच्चयविच्छित्ति णायव्वा ॥११॥

अन्वयार्थ : पहले गुणस्थान में ५, दूसरे में ४, तीसरे में शून्य, चौथे में ७, पाँचवें में १५, छठे में २, सातवें में शून्य, आठवें में छह, नवमें के छह भागों में क्रम से १-१ करके छह, दसवें में १, ग्यारहवें में शून्य, बारहवें में ४, तेरहवें में ७, चौदहवें में शून्य ऐसे आस्रवों की व्युच्छित्ति का क्रम जानना ॥११॥

गुणस्थान में नहीं होने वाले आस्रव

मिच्छे हारदु सासणसम्मे मिच्छत्तपंचकं णत्थि ।

अण दो मिस्सं कम्मं मिस्से ण चउत्थए सुणह ॥१२॥

अन्वयार्थ : मिथ्यात्व में आहारक योग, आहारकमिश्र नहीं हैं, सासादन सम्यक्त्व में पाँच मिथ्यात्व नहीं हैं, मिश्र गुणस्थान में अनंतानुबंधी ४, औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र, कार्मण ये ७ आस्रव नहीं हैं, अब चौथे गुणस्थान में सुनो ॥१२॥

दो मिस्स कम्म खित्तय तसवह वेगुव्व तस्स मिस्सं च ।

ओरालमिस्स कम्ममपच्चक्खाणं तु ण हि पंचे ॥१३॥

अन्वयार्थ : चतुर्थ गुणस्थान में औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कार्मणयोग नहीं है । पाँचवें में त्रसवध, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र,

औदारिकमिश्र, कार्मण और अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ ये नव आस्रव नहीं हैं ॥१३॥
इत्तो उवरिं सगसगविच्छित्तिअणासवाण संजोगे ।
उवरुविंर गुणठाणे होंतित्ति अणासवा णेया ॥१४॥
अन्वयार्थ : इसके आगे अपने-अपने गुणस्थानों में व्युच्छिन्न आस्रवों को ऊपर-ऊपर के गुणस्थानों में मिलाते जाइये, वे ही अनास्रव बन जाते हैं ॥१४॥

गुणस्थानों में व्युच्छिन्न आस्रव

मिच्छे पणमिच्छत्तं साणे अणचारि मिस्सगे सुण्णं ।
अयदे विदियकसाया तसवह वेगुव्वजुगलछिदी ॥१५॥
अन्वयार्थ : मिथ्यात्व गुणस्थान में ५ मिथ्यात्व की व्युच्छित्ति होती है । सासादन में अनंतानुबंधी चार की, मिश्र में शून्य, चतुर्थ गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण कषाय ४, त्रसवध, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र इन ७ की व्युच्छित्ति होती है ॥१५॥
अविरयएक्कारह तियचउक्कसाया पमत्तए णत्थि ।
अत्थि हु आहारदुगं हारदुगं णत्थि सत्तट्ठे ॥१६॥
अन्वयार्थ : देशसंयत गुणस्थान में ११ अविरति, प्रत्याख्यानावरण क्रोधादि चार इन १५ की व्युच्छित्ति होती है अत: ये १५ आस्रव प्रमत्तसंयत में नहीं हैं एवं प्रमत्तसंयत में आहारकयुगल पाये जाते हैं । आगे सातवें, आठवें गुणस्थान में ये आहारकद्विक नहीं हैं अर्थात् छठे में आहारकद्विक की व्युच्छित्ति होती है । सातवें में व्युच्छित्ति किसी आस्रव की नहीं है ॥१६॥
छण्णोकसाय णवमे ण हि दसमे संढमहिलपुंवेयं ।
कोहो माणो माया ण हि लोहो णत्थि उवसमे खीणे ॥१७॥
अन्वयार्थ : छह नोकषाय नवमें गुणस्थान में नहीं हैं अर्थात् आठवें में हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इन छह आस्रवों की व्युच्छित्ति हो जाती है । दसवें गुणस्थान में नपुंसक, स्त्री, पुरुषवेद, क्रोध, मान, माया ये छह आस्रव नहीं हैं, इनकी व्युच्छित्ति नवमें गुणस्थान के छह भागों में क्रम से हो जाती है । उपशांतमोह, क्षीणमोह नामक ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान में लोभ कषाय नहीं है मतलब दसवें में लोभ की व्युच्छित्ति हो जाती है, ग्यारहवें गुणस्थान में व्युच्छित्ति का अभाव है ॥१७॥
अलियमणवयणमुभयं णत्थि जिणे अत्थि सच्चमणुभयं ।
मिस्सोरालियकम्मं अपच्चयाऽजोगिणो होंति ॥१८॥
अन्वयार्थ : असत्य मनोयोग, असत्यवचन योग, उभय मनोयोग, उभय वचनयोग ये ४ योग सयोगकेवली में नहीं हैं, इन चारों की व्युच्छित्ति बारहवें में हो चुकी है एवं सयोगकेवली जिनेन्द्र भगवान के सत्यमनोयोग, अनुभय मनोयोग, सत्यवचन योग, अनुभयवचनयोग, औदारिक, औदारिकमिश्र और कार्मण ये ७ आस्रव पाये जाते हैं किन्तु इस सयोगी गुणस्थान के अंत में इनकी व्युच्छित्ति हो जाने से अयोगकेवली आस्रव एवं आस्रव की व्युच्छित्ति से रहित हैं ॥१८॥
गुणस्थानों में आस्रव के उत्तर प्रत्यय नाना जीवों की अपेक्षा एक जीव की अपेक्षा गुणस्थान प्रत्यय जघन्य उत्कृष्ट संख्या अनुदय व्युच्छित्ति संख्या प्रत्यय संख्या प्रत्यय मिथ्यादृष्टि 55 2 (आहारक,आहारक-मिश्र योग) 5 (५ मिथ्यात्व) 10 १ मिथ्यात्व, २ असंयम, ३ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, १ योग 18 १ मिथ्यात्व, ७ असंयम, ४ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, भय, जुगुप्सा, १ योग सासादन 50 7 4 (अनंतानुबंधी ४) 10 २ असंयम, ७ (४ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति), १ योग 17 ७ असंयम, ९ (४ कषाय, १ वेद, ४ (हास्य-रति / शोक-अरति, भय, जुगुप्सा, १ योग सम्यग्मिथ्यादृष्टि 43 14 (औदारिक-मिश्र,वैक्रियिक-मिश्र,कार्मण) 0 9 २ असंयम, ३ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, १ योग 16 ७ असंयम, ३ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, भय, जुगुप्सा, १ योग असंयत सम्यग्दृष्टि 46 (+ औदारिक-मिश्र,वैक्रियिक-मिश्र,कार्मण) 11 7 (४ अप्रत्याख्यान, औदारिक-मिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिक-मिश्र, कार्मण, १ असंयम) संयतासंयत 37 20 (औदारिक-मिश्र,कार्मण) 15 (४ प्रत्याख्यान, शेष ११ असंयम) 8 २ असंयम, २ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, १ योग 14 ६ असंयम, २ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, भय, जुगुप्सा, १ योग प्रमत्तसंयत 24 (+ आहारक,आहारक-मिश्र) 33 2 (आहारक,आहारक-मिश्र) 5 १ कषाय, १ वेद, हास्य-रति / शोक-अरति, १ योग 7 १ कषाय, १ वेद,

हास्य-रति / शोक-अरति, भय, जुगुप्सा, १ योग अप्रमत्तसंयत 22 35 0 अपूर्वकरण 22 35 6 (६ नोकषाय) अनिवृत्तिकरण प्रथम भाग 16 41 1 (नपुंसक-वेद) 2 १ कषाय, १ योग 3 १ कषाय, १ वेद, १ योग द्वितीय भाग 15 42 1 (स्त्री-वेद) तृतीय भाग 14 43 1 (पुरुष-वेद) चतुर्थ भाग 13 44 1 (संज्वलन क्रोध) पंचम भाग 12 45 1 (संज्वलन मान) छठा भाग 11 46 1 (संज्वलन माया) सातवाँ भाग 10 47 0 सूक्ष्मसाम्पराय 10 47 1 (सूक्ष्म-लोभ) 2 १ कषाय, १ योग 2 १ कषाय, १ योग उपशान्त कषाय 9 48 0 1 १ योग 1 १ योग क्षीण कषाय 9 48 4 (असत्य मन / वचन, उभय मन / वचन योग) सयोग केवली 7 (+ औदारिक मिश्र / कार्मण काय योग) 50 7 (औदारिक,औदारिक-मिश्र,सत्य-२ [मन और वचन],अनुभय-२ [मन और वचन],कार्मण) कुल बंध प्रत्यय = 57 (५ मिथ्यात्व, १२ असंयम, २५ कषाय, १५ योग)

पच्चयसत्तावण्णा गणहरदेवेहिं अक्खिया सम्मं ।
ते चउबंधणिमित्ता बंधादो पंचसंसारे ॥१९॥

अन्वयार्थ : इस प्रकार से गणधर देवों ने सम्यक् प्रकार से सत्तावन प्रत्यय-आस्रव बतलाये हैं । ये आस्रव द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव रूप पाँच प्रकार के संसार को प्राप्त कराने में कारणभूत प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप चार प्रकार के कर्मबंध के लिये निमित्तभूत हैं ॥१९॥

गुणस्थानों में आस्रव की संख्या

पणवण्णं पण्णासं तिदाल छादाल सत्ततीसा य ।
चउवीस दुवावीसं सोलसमेगूण जाव णव सत्ता ॥२०॥

अन्वयार्थ : मिथ्यात्व गुणस्थान में ५५, सासादन में ५०, मिश्र में ४३, असंयत में ४६, देशविरत में ३७, प्रमत्त में २४, अप्रमत्त में २२, अपूर्वकरण गुणस्थान में २२, अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के प्रथम भाग में १६, आगे छठे भाग तक एवं आगे नव आस्रव तक १-१ कम करते चलिये अर्थात् द्वितीय भाग में १५, तृतीय में १४, चतुर्थ में १३, पंचम में १२, छठे में ११ आस्रव हैं । वैसे ही दसवें गुणस्थान में १०, उपशांत में ९ और क्षीणकषाय गुणस्थान में ९ आस्रव होते हैं । सयोगकेवली में ७ आस्रव होते हैं ॥२०॥

गुणस्थानों में अनास्रवों की संख्या

दुग सग चदुरिगिदसयं वीसं तियपणदुसहियतीसं च ।
इगिसगअडअडदालं पण्णासा होंति सगवण्णा ॥२१॥

अन्वयार्थ : प्रथम गुणस्थान में २, द्वितीय में ७, तृतीय में १४, चतुर्थ में ११, पंचम में २०, छठे में ३३, सातवें में ३५, आठवें में ३५, नवमें के प्रथम भाग में ४१, आगे ४७ तक एक-एक बढ़ते चलिये अर्थात् द्वितीय भाग में ४२, तृतीय भाग में ४३, चतुर्थ भाग में ४४, पंचम भाग में ४५, छठे भाग में ४६ आस्रव नहीं होते हैं । दसवें गुणस्थान में ४७, ग्यारहवें में ४८, बारहवें गुणस्थान में ४८, तेरहवें में ५० और चौदहवें में ५७ अनास्रव होते हैं अर्थात् उपर्युक्त आस्रव नहीं होते हैं ॥२१॥

गुणस्थानों में योग

तिसु तेरं दस मिस्से सत्तसु णव छट्ठयम्मि एक्कारा ।
जोगिम्हि सत्तजोगा अजोगिठाणं हवे सुण्णं ॥२२॥

अन्वयार्थ : तीन गुणस्थानों में १३-१३, मिश्र में १०, सात गुणस्थानों में ९-९ एवं छठे में ११, सयोगी में ७, अयोगी में शून्य होते हैं अर्थात् प्रथम गुणस्थान में १३, द्वितीय में १३, तृतीय में १०, चतुर्थ में १३, पंचम में ९, छठे में ११, सातवें में ९, आठवें में ९, नवमें में ९, दसवें में ९, ग्यारहवें में ९, बारहवें में ९, तेरहवें में ७ और चौदहवें में शून्य है ॥२२॥

गुणस्थानों में कषाय

दुसु दुसु पणइगिवीसं सत्तरसं देससंजदे तत्तो ।

तिसु तेरं णवमे सग सुहमेगं होंति हु कसाया ॥२३॥

अन्वयार्थ : दो गुणस्थानों में २५, दो गुणस्थानों में २१, देशसंयत में १७, आगे तीन गुणस्थानों में १३, नवमें गुणस्थान में ७, दसवें में १ कषाय होती है ॥२३॥

इस प्रकार से गुणस्थान में त्रिभंगी समाप्त हुई ।

मार्गणा में आस्रव

विजिदचउघाइकम्मे केवलणाणेण णादसयलत्थे ।

वीरजिणे वंदित्ता जहाकमं मग्गणासवं वोच्छे ॥२४॥

अन्वयार्थ : जिन्होंने चार घातिया कर्मों को जीत लिया है एवं केवलज्ञान के द्वारा संपूर्ण पदार्थों को जान लिया है ऐसे श्री वीर जिनेन्द्र को नमस्कार करके मैं क्रम से मार्गणाओं में आस्रवों को कहूँगा ॥२४॥

मार्गणा में आस्रव मार्गणा गुणस्थान कुल 5 मिथ्यात्व 12 अविरति 25 कषाय 15 योग गति नरक 1 से 7 1 51 5 12 23 (-२ वेद) 11 (15-आहा.द्वि.,औदा.द्वि.) 2 44 0 12 23 9 (11-वै.मि.,कार्मण) 3 40 0 12 19 (अनं.-४) 9 पहला 4 42 0 12 19 11 (9+वै.मि.,कार्मण) 2 से 7 4 40 0 12 19 9 तिर्यञ्च कर्मभूमि 1 53 5 12 25 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 2 48 0 12 25 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 3 42 0 12 21 (25-अनं.-४) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 4 44 0 12 21 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 5 37 0 11 17 (21-अप्र.-४) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भोगभूमि 1 52 5 12 24 (25-नपुंसक वेद) 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 2 47 0 12 24 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 3 41 0 12 20 (24-अनं. ४) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 4 43 0 12 20 (24-अनं. ४) 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) लब्ध्यपर्याप्तक 1 42 5 12 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) मनुष्य कर्मभूमि सामान्य 55 5 12 25 13 (15-वै.द्वि.) 1 53 5 12 25 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 2 48 0 12 25 11 3 42 0 12 21 (25-अनं. ४) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 4 44 0 12 21 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 5 37 0 11 (12-त्रसहिंसा अविरति) 17 (21-4 अप्र.) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 6 24 0 0 13 (17-4 प्र.) 11 (15-वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 7-8 22 0 0 13 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 9 भाग 1 16 0 0 7 (13-6 नोकषाय) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भाग 2 15 0 0 6 (7-नपुं. वेद) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भाग 3 14 0 0 5 (6-स्त्री वेद) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भाग 4 13 0 0 4 (5-पुरुष वेद) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भाग 5 12 0 0 3 (4-क्रोध कषाय) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भाग 6 11 0 0 2 (3-मान कषाय) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) भाग 7 10 0 0 1 (2-माया कषाय) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 10 10 0 0 1 9 11-12 9 0 0 0 9 13 7 0 0 0 7 (औदा.द्वि.,कार्मण,सत्य-अनुभय मन-वचन योग) भोगभूमि 1 52 5 12 24 (25-नपुं.वेद) 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) 2 47 0 12 24 (25-नपुं.वेद) 11 3 41 0 12 20 (25-अनं. ४,नपुं.वेद) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 4 43 0 12 20 (25-अनं. ४,नपुं.वेद) 11 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.) लब्ध्यपर्याप्तक 1 42 5 12 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) देव भवनत्रिक, देवियाँ 1 52 5 12 24 (25-नपुं. वेद) 11 (15-आहा.द्वि.,औदा.द्वि.) 2 47 0 12 24 11 3,4 41 0 12 20 (24-अनं. ४) 9 (15-आ.द्वि.,औदा.द्वि.,वै.मि.,कार्मण) सौधर्म से ग्रैवेयिक 1 51 5 12 23 (25-२ वेद) 11 (15-आहा.द्वि.,औदा.द्वि.) 2 46 0 12 23 (25-२ वेद) 11 3 40 0 12 19 (23-अनं. ४) 9 (15-आ.द्वि.,औदा.द्वि.,वै.मि.,कार्मण) 4 42 0 12 19 (23-अनं. ४) 11 (15-आ.द्वि.,औदा.द्वि.) अनुदिश, अनुत्तर 4 42 0 12 19 (23-अनं. ४) 11 (15-आ.द्वि.,औदा.द्वि.) इंद्रिय एकेन्द्रिय 1 38 5 7 (12-४इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 3 (कार्मण, औदा.द्वि.) 2 32 0 7 (12-४इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) दो इंद्रिय 1 40 5 8 (12-३इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 4 (अनु. वचनयोग,कार्मण,औदा.द्वि.) 2 33 0 8 (12-३इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) तीन इंद्रिय 1 41 5 9 (12-२इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 4 (अनु. वचनयोग,कार्मण,औदा.द्वि.) 2 34 0 9 (12-२इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) चार इंद्रिय 1 42 5 10 (12-1इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 4 (अनु. वचनयोग,कार्मण,औदा.द्वि.) 2 35 0 10 (12-1इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) पंचेंद्रिय 57 5 12 25 15 काय पृथ्वी,जल,वनस्पति 1 38 5 7 (12-४इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 3 (कार्मण, औदा.द्वि.) 2 32 0 7 (12-४इंद्रिय और

मन) 23 (25-२ वेद) 2 (कार्मण, औदा.मि.) अग्नि,वायु 1 38 5 7 (12-४इंद्रिय और मन) 23 (25-२ वेद) 3 (कार्मण, औदा.द्वि.) त्रस 57 5 12 25 15 योग 10 (४ मन,४ वचन,वैक्रियिक,औदारिक) 1 43 5 12 25 1 (कोई 1 योग) 2 38 0 12 25 3 34 0 12 21 (25-अनं. ४) 4 34 0 12 21 (25-अनं. ४) 9 (४ मन,४ वचन,औदारिक) 5 29 0 11 17 (21-अप्र.-४) 1 (कोई 1 योग) 6,7,8 14 0 0 13 (17-4 प्र.) 9 भाग 1 8 0 0 7 (13-6 नोकषाय) भाग 2 7 0 0 6 (7-नपुं. वेद) भाग 3 6 0 0 5 (6-स्त्री वेद) भाग 4 5 0 0 4 (5-पुरुष वेद) भाग 5 4 0 0 3 (4-क्रोध कषाय) भाग 6 3 0 0 2 (3-मान कषाय) भाग 7 2 0 0 1 (2-माया कषाय) 10 2 0 0 1 11-12 1 0 0 0 5 (2 मन,2 वचन,औदारिक) 13 1 0 0 0 1 (कोई 1 योग) वैक्रियिक मिश्र 1 43 5 12 25 1 (वैक्रियिक मिश्र) 2 37 0 12 24 (25-नपुं.वेद) 4 33 0 12 20 (25-अनं. ४,स्त्री वेद) औदारिक मिश्र 1 43 5 12 25 1 (औदारिक मिश्र) 2 38 0 12 25 4 32 0 12 19 (25-अनं. ४,२ वेद) 13 1 0 0 0 आहारक 6 12 0 0 11 (25-कषाय १२,२ वेद) 1 (आहारक या आहारक-मिश्र) वेद तीनों वेद 1 53 5 12 23 (25-२ वेद) 13 (15-आहारक द्विक) स्त्री / पुरुष 2 48 0 12 23 13 नपुंसक 47 0 12 23 12 (13-वैक्रियिक मिश्र) तीनों वेद 3 41 0 12 19 (23-अनं.४) 10 (12-औदा.मिश्र,कार्मण) पुरुष 4 44 0 12 19 (23-अनं.४) 13 स्त्री 41 0 12 19 (23-अनं.४) 10 (12-औदा.मिश्र,कार्मण) नपुंसक 43 0 12 19 (23-अनं.४) 12 (13-औदा.मिश्र) तीनों वेद 5 35 0 11 15 (23-अनं.४,अप्र.४) 9 (13-वैक्रि.द्वि.,औदा.मिश्र,कार्मण) पुरुष 6 22 0 0 11 (23-12 कषाय) 11 (15-वैक्रि.द्वि.,औदा.मिश्र,कार्मण) स्त्री / नपुंसक 20 0 0 11 9 (11-आहा.द्विक) तीनों वेद 7,8 20 0 0 11 9 (11-आहा.द्विक) तीनों वेद 9 (भाग १) 14 0 0 5 (11-6 नोकषाय) 9 (11-आहा.द्विक) स्त्री / पुरुष वेद 9 (भाग २) पुरुष वेद 9 (भाग ३) कषाय चारों 1 43 5 12 13 (25-१२ कषाय) 13 (15-आहा. द्विक) 2 38 0 12 13 13 3 34 12 12 (13-अनं. १) 10 (13-औदा.मिश्र,वै.मिश्र,कार्मण) 4 37 12 12 (13-अनं. १) 13 (15-आहा.द्वि.) 5 31 11 11 (12-अप्र. १) 9 (13-औदा.मिश्र,वै.द्विक,कार्मण) 6 21 0 10 (11-प्र. १) 11 (15-औदा.मिश्र,वै.द्विक,कार्मण) 7-8 19 10 (11-प्र. १) 9 (15-आहा.द्वि.,औदा.मिश्र,वै.द्विक,कार्मण) 9 भाग 1 13 4 (10-नोकषाय ६) भाग 2 12 3 (4-नपुं.वेद) भाग 3 11 2 (3-स्त्री वेद) भाग 4 10 1 (2-पुरुष वेद) मान,माया,लोभ भाग 5 9 0 0 1 (३ कषाय में से एक) माया,लोभ भाग 6 8 0 0 1 (२ कषाय में से एक) लोभ भाग 7 7 0 0 1 (लोभ कषाय) 10 7 1 (लोभ कषाय) ज्ञान कुमति / कुश्रुत 1 55 5 12 25 13 (15-आहा.द्वि.) 2 50 0 विभंगावधि 1 52 5 12 25 10 (15-वै.मिश्र,आहा.द्विक,औदा.मिश्र,कार्मण) 2 47 0 मति / श्रुत / अवधि 4 से 12 46 गुणस्थान अनुसार मन:पर्यय 6 20 0 0 11 (17-प्र. ४,२ वेद) 9 7-8 20 11 9 भाग 1,2,3 16 5 (11-6 नोकषाय) भाग 4 13 4 (5-पुरुष वेद) भाग 5 12 3 (4-क्रोध कषाय) भाग 6 11 2 (3-मान कषाय) भाग 7 10 1 (लोभ कषाय) 10 10 1 (लोभ कषाय) 11-12 9 0 केवल 13 7 0 7 (औदा.द्वि.,कार्मण,सत्य-अनुभय मन-वचन) संयम सामायिक, छेदोपस्थापना 6 24 0 0 13 (17-4 प्र.) 11 (15-वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 7-8 22 13 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 9 भाग 1 16 7 (13-6 नोकषाय) भाग 2 15 6 (7-नपुं. वेद) भाग 3 14 5 (6-स्त्री वेद) भाग 4 13 4 (5-पुरुष वेद) भाग 5 12 3 (4-क्रोध कषाय) भाग 6 11 2 (3-मान कषाय) परिहारविशुद्धि 6,7 20 0 0 11 (४ कषाय,६ नोकषाय,१ वेद) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) सूक्ष्मसाम्पराय 10 10 0 0 1 (लोभ) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) यथाख्यात 11,12 9 0 0 0 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 13 7 7 (औदा.द्वि.,कार्मण,सत्य-अनुभय मन-वचन) देशसंयम 5 37 0 11 (12-त्रसहिंसा अविरति) 17 (21-4 अप्र.) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) असंयम 1 55 5 12 25 13 (15-आहा.द्वि.) 2 50 0 3 43 21 (25-अनं. ४) 10 (13-औदा.मिश्र,वै.मिश्र,कार्मण) 4 46 13 (15-आहा.द्वि.) दर्शन चक्षु / अचक्षु 1 से 12 57 गुणस्थान अनुसार अवधिदर्शन 4 से 12 48 अवधि-ज्ञान के समान केवल 13 7 0 0 0 7 (औदा.द्वि.,कार्मण,सत्य-अनुभय मन-वचन) लेश्या कृष्ण, नील, कापोत 1 55 5 12 25 13 (15-आहा.द्वि.) पीत, पद्म, शुक्ल 54 12 (15-आहा.द्वि.,औदा.मिश्र) कृष्ण, नील, कापोत 2 50 0 13 (15-आहा.द्वि.) पीत, पद्म, शुक्ल 49 12 (15-आहा.द्वि.,औदा.मिश्र) छहों 3 43 0 21 (25-अनं. ४) 10 (13-औदा.मिश्र,वै.मिश्र,कार्मण) कृष्ण, नील 4 45 0 12 (15-आहा.द्वि.,वै.मिश्र) कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल 46 13 (15-आहा.द्वि.) पीत, पद्म, शुक्ल 5 37 0 11 (12-त्रसहिंसा अविरति) 17 (21-4 अप्र.) 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 6 24 0 13 (17-4 प्र.) 11 (15-वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 7 22 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) शुक्ल 8 22 0 0 13 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 9 भाग 1 16 7 (13-6 नोकषाय) भाग 2 15 6 (7-नपुं. वेद) भाग 3 14 5 (6-स्त्री वेद) भाग 4 13

4 (5-पुरुष वेद) भाग 5 12 3 (4-क्रोध कषाय) भाग 6 11 2 (3-मान कषाय) भाग 7 10 1 (2-माया कषाय) 10 10 1 11,12 9 0 13 7 0 7 (औदा.द्वि.,कार्मण,सत्य-अनुभय मन-वचन) भव्य अभव्य 1 55 5 12 25 13 (15-आहा. द्विक) भव्य 1 से 14 57 गुणस्थान अनुसार सम्यक्त्व उपशम 4 45 0 12 21 12 (15-आहा.द्विक,औदा.मिश्र) 5 37 11 17 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 6 से 8 22 0 13 9 भाग 1 16 7 (13-6 नोकषाय) भाग 2 15 6 (7-नपुं. वेद) भाग 3 14 5 (6-स्त्री वेद) भाग 4 13 4 (5-पुरुष वेद) भाग 5 12 3 (4-क्रोध कषाय) भाग 6 11 2 (3-मान कषाय) भाग 7 10 1 (2-माया कषाय) 10 10 1 11 9 0 वेदक 4 46 0 12 21 13 (15-आहा.द्विक) 5 37 11 17 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 6 24 0 13 11 (15-वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) 7 22 9 (15-आहा.द्वि.,वै.द्वि.,औदा.मि.,कार्मण) क्षायिक 4 से 14 48 गुणस्थान अनुसार मिश्र 3 43 सासादन 2 50 मिथ्यात्व 1 55 संज्ञी संज्ञी 1 से 12 57 गुणस्थान अनुसार असंज्ञी 1 45 5 11 25 4 (अनु. वचनयोग,कार्मण,औदा.द्वि.) 2 38 0 2 (कार्मण,औदा.मिश्र.) आहारक आहारक 1 54 5 12 25 12 (15-आहा.द्विक,कार्मण) 2 49 0 3 43 21 (25-अनं. ४) 10 (15-आहा.द्वि.,वै.मि.,औदा.मि.,कार्मण) 4 45 12 (15-आहा.द्वि.,कार्मण) 5 से 13 37 गुणस्थान अनुसार अनाहारक 1 43 5 12 25 1 (कार्मण) 2 38 0 4 34 21 13 1 0 0 आस्रव त्रिभंगी -- गाथा 24 से 60

पर्याप्त-अपर्याप्त के आस्रव

मिस्सतियकम्मणूणा पुण्णाणं पच्चया जहाजोगा ।
मणवयणचउ-सरीरत्तयरहिदा पुण्णगे होंति ॥२५॥

अन्वयार्थ : पर्याप्त अवस्था में औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मण से रहित यथायोग्य अपने-अपने गुणस्थानों के अनुसार आस्रव होते हैं एवं अपर्याप्तक अवस्था में चार मनोयोग, चार वचनयोग, औदारिक, वैक्रियक, आहारक ये तीन काययोग, इन ग्यारह योगों से रहित आस्रव होते हैं ॥२५॥

नरकगति में आस्रव

इत्थीपुंवेददुगं हारोरालियदुगं च वज्जित्ता ।
णेरइयाणं पढमे इगिवण्णा पच्चया होंति ॥२६॥

अन्वयार्थ : नारकियों के प्रथम नरक में स्त्रीवेद, पुरुष वेद, आहारक, आहारकमिश्र, औदारिक, औदारिकमिश्र इन छह आस्रव के बिना इक्यावन आस्रव होते हैं ॥२६॥

विदि यगुणे णिरयगिंद ण यादि इदि तस्स णत्थि कम्मइयं ।
वेगुव्वियमिस्सं च दु ते होंति हु अविरदे ठाणे ॥२७॥

अन्वयार्थ : द्वितीय गुणस्थान से नरकगति में नहीं जाता है अत: नरक में द्वितीय गुणस्थान में कार्मण, वैक्रियकमिश्र नहीं रहते हैं । ये दोनों अविरतगुणस्थान में रहते हैं अर्थात् प्रथम नरक में चौथे गुणस्थान में ही वैक्रियकमिश्रकार्मण रहते
हैं, सम्यग्दृष्टि सम्यक्त्व सहित मरकर पहले नरक तक ही जा सकता है ॥२७॥

सक्करपहुदिसु एवं अविरदठाणे ण होइ कम्मइयं ।
वेगुव्वियमिस्सो वि य तेसिं मिच्छेव वोच्छेदो ॥२८॥

अन्वयार्थ : द्वितीय नरक से लेकर सातवें नरक तक इसी प्रकार आस्रव हैं, अंतर केवल इतना ही है कि अविरत गुणस्थान में वैक्रियक मिश्र और कार्मण नहीं होता है क्योंकि इन दोनों की व्युच्छित्ति मिथ्यात्व गुणस्थान में ही हो जाती है ॥२८॥

तिर्यंचगति के आस्रव

वेगुव्वाहारदुगं ण होइ तिरियेसु सेसतेवण्णा॥
एवं भोगावणिजे संढ विरहिऊण वावण्णा ॥२९॥

अन्वयार्थ : तिर्यंचों में वैक्रियकद्विक, आहारकद्विक नहीं होते हैं अत: त्रेपन आस्रव होते हैं । इसी प्रकार से भोगभूमियों में वैक्रियकद्विक,

आहारकद्विक एवं नपुंसकवेद से रहित ५२ आस्रव होते हैं ॥२९॥

लद्धि अपुण्णतिरिक्खे हारदु मणवयण अट्ठ ओरालं ।
वेगुव्वदुगं पुंवेदित्थीवेदं ण बादालं ॥३०॥

अन्वयार्थ : लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यंचों में आहारकद्विक, मनोयोग चार, वचनयोग ४, औदारिक, वैक्रियकद्विक, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, इन पंद्रह आस्रवों के बिना ४२ आस्रव होते हैं ।

मनुष्यगति के आस्रव

मणुवेसु ण वेगुव्वदु पणवण्णं संति तत्थ भोगेसु ।
हारदुसंढविवज्जिद दुवण्णऽपुण्णे अपुण्णे वा ॥३१॥

अन्वयार्थ : कर्मभूमिज मनुष्यों के वैक्रियकद्विक के बिना ५५ आस्रव होते हैं । भोगभूमिज मनुष्यों में आहारकद्विक और नपुंसकवेद रहित ५२ होते हैं एवं लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य में लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच के समान ४२ आस्रव होते हैं अर्थात् आहारकद्विक, मनोयोग चार, वचनयोग चार, औदारिक, वैक्रियकद्विक, स्त्री, पुरुषवेद इन १५ से रहित ४२ आस्रव होते हैं ॥३१॥

लब्ध्यपर्याप्त में ४३ आस्रव एवं प्रथम ही गुणस्थान है ।

देवगति के आस्रव

देवे हारोरालियजुगलं संढं च णत्थि तत्थेव ।
देवाणं देवीणं णेवित्थी णेव पुंवेदो ॥३२॥

अन्वयार्थ : देवों में आहारक युगल, औदारिक युगल और नपुंसक वेद ऐसे ५ नहीं होने से ५२ आस्रव होते हैं । मात्र देवों में स्त्रीवेद और देवियों में पुरुषवेद नहीं है ॥३२॥

भवणतिकप्पित्थीणं असंजदठाणे ण होइ कम्मइयं ।
वेगुव्वियमिस्सो वि य तेसिं पुणु सासणे छेदो ॥३३॥

अन्वयार्थ : भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिर्वासी देव और कल्पवासी देवियों में चौथे गुणस्थान में कार्मण एवं वैक्रियकमिश्र योग नहीं होता है, इन दोनों का सासादन में व्युच्छेद हो जाता है ॥३३॥

एवं उवरिं णवपणअणुदिसणुत्तरविमाणजादा जे ।
ते देवा पुणु सम्मा अविरदठाणुव्व णायव्वा ॥३४॥

अन्वयार्थ : इसके ऊपर नव अनुदिश और पाँच अनुत्तर विमानों में उत्पन्न होने वाले देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं अत: इनमें चौथा गुणस्थान ही होता है ॥३४॥

अनुदिश, अनुत्तर में सम्यग्दृष्टि देवों के ४२ आस्रव हैं, चौथा ही गुणस्थान है ।

इंद्रिय मार्गणा, कायमार्गणा

पुंवेदित्थिविगुव्वियहारदुमणरसणचदुहि एयक्खे॥
मणचदुवयणचदूहि य रहिदा अडतीस ते भणिदा ॥३५॥

अन्वयार्थ : एकेन्द्रिय जीवों में पुरुषवेद, स्त्रीवेद, वैक्रियकद्विक, आहारकद्विक, स्पर्शन इंद्रिय के सिवाय रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र और मन इन पाँच इंद्रियों की अविरति, चार मनोयोग, चार वचनयोग, इन १९ आस्रव से रहित ३८ आास्रव होते हैं ॥३५॥

एयक्खे जे उत्ता ते कमसो अंतभासरसणेहिं ।
घाणेण य चक्खूहिं य जुत्ता वियलिंदिए णेया ॥३६॥

अन्वयार्थ : दो इंद्रिय जीवों में इन्हीं ३८ में अनुभय वचनयोग और रसना इंद्रिय मिलाने से ४० आस्रव होते हैं ऐसे ही तीन इंद्रिय जीवों में घ्राण इंद्रिय मिलाने से ४१ हुये, चतुरिन्द्रिय में एक चक्षु इंद्रिय मिलाने से ४२ हुये, ऐसे समझना चाहिए ॥३६॥

इगविगलिंदियजणिदे सासणठाणे ण होइ ओरालं ।
इणमणुभयं च वयणं तेसिं मिच्छेव वोच्छेदो ॥३७॥
अन्वयार्थ : एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होने वालों के सासादन गुणस्थान में औदारिक योग, अनुभयवचन नहीं होता है अत: इन दोनों की व्युच्छित्ति मिथ्यात्व गुणस्थान में ही हो जाती है ॥३७॥
पंचेंदियजीवाणं तसजीवाणं च पच्चया सव्वे ।
पुढवीआदिसु पंचसु एइंदिय कहिद अडतीसा ॥३८॥
अन्वयार्थ : पंचेन्द्रिय जीवों में और त्रस जीवों में सभी आस्रव पाये जाते हैं । पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतिकायिक इन पाँच स्थावरों में एकेन्द्रिय के समान ३८ आस्रव होते हैं ॥३८॥

योग मार्गणा

हारदुगं वज्जित्ता जोगाणं तेरसाणमेगेगं ।
जोगं पुणु पक्खित्ता तेदाला इदरयोगूणा ॥३९॥
अन्वयार्थ : आहारकद्विक को छोड़कर तेरह योग में जिसमें आस्रव को घटित करना है वह एक योग, पाँच मिथ्यात्व, १२ अविरति और २५ कषाय ये ४३ आस्रव होते हैं, सभी में उस योग के सिवाय शेष योग घट जाते हैं अर्थात् औदारिक काययोग में औदारिक काययोग, ५ मिथ्यात्व , १२ अविरति, २५ कषाय रहते हैं, ऐसे तेरह योगों में सभी में अपना-अपना योग मिलाकर शेष घटा देने से ४३-४३ आस्रव होते हैं ॥३९॥
ओरालमिस्स साणे संढत्थीणं च वोच्छिदी होदि ।
वेगुव्वमिस्स साणे इत्थीवेदस्स वोच्छेदो ॥४०॥
अन्वयार्थ : औदारिकमिश्र के सासादन गुणस्थान में नपुंसकवेद, स्त्रीवेद की व्युच्छित्ति हो जाती है, वैक्रियकमिश्र के सासादन गुणस्थान में स्त्रीवेद की व्युच्छित्ति होती है ॥४०॥
तेसिं साणे संढं णत्थि हु सो होइ अविरदे ठाणे ।
कम्मइए विदियगुणे इत्थीवेदच्छिदी होइ ॥४१॥
अन्वयार्थ : वैक्रियकमिश्र में सासादन में नुपंसकवेद नहीं है किन्तु चौथे गुणस्थान में अवश्य है अर्थात् देवों को वैक्रियकमिश्र होता है, वहाँ नपुंसकवेद है ही नहीं और नरक में होता है तो वहाँ सासादन से मरकर जाता नहीं है । कार्मण काययोग में द्वितीय गुणस्थान में स्त्रीवेद की व्युच्छित्ति होती है ॥४१॥
संजलणं पुवेयं हस्सादीणोकसायछक्कं च ।
णियएक्कजोग्गसहिया वारस आहारगे जुम्मे ॥४२॥
अन्वयार्थ : आहारक काययोग में चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्यादि नो कषाय छह और आहारक योग ये १२ आस्रव होते हैं, ये ही बारह आहारकमिश्र में होते हैं केवल योग के स्थान में आहारक निकालकर आहारकमिश्र कर दीजिये ॥४२॥
आहारकद्विक में छठा गुणस्थान ही होता है उसमें १२ आस्रव हैं ।
पुंवेदे थीसंढं वज्जित्ता सेसपच्चया होंति ।
इत्थीवेदे हारदु पुंसंढं च वज्जिदा सव्वे ॥४३॥
अन्वयार्थ : पुरुषवेद में स्त्रीवेद, नपुंसकवेद को छोड़कर सभी आस्रव होते हैं । स्त्रीवेद में आहारकद्विक, पुरुषवेद, नपुंसकवेद को छोड़कर ५३ आस्रव होते हैं ॥४३॥
मिस्सदुकम्मइयच्छिदी साणे संढे ण होइ पुरसिच्छी ।
हारदुगं विदियगुणे ओरालियमिस्स वोच्छेदो ॥४४॥
अन्वयार्थ : स्त्रीवेद के सासादन गुणस्थान में औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कार्मण की व्युच्छित्ति हो जाती है । नपुंसकवेद में पुरुषवेद, स्त्रीवेद, आहारकद्विक चार आस्रव न होने से ५३ होते है । नपुंसकवेद के द्वितीय गुणस्थान में औदारिकमिश्र की व्युच्छित्ति हो

जाती है ॥४४॥

तेसिं अवणिय वेगुव्वियमिस्स अविरदे हु णिक्खेवे ।

कोहचउक्के माणादिबारसहीण पणदाला ॥४५॥

अन्वयार्थ : इस नपुंसकवेद के सासादन गुणस्थान में वैक्रियकमिश्र नहीं है परन्तु चतुर्थ गुणस्थान में वैक्रियक मिश्र होता है ॥४५॥

विशेष-यहाँ स्त्रीवेद, नपुंसकवेद नव गुणस्थानों में हैं यह भाववेद का कथन है ।

माणादितिये एवं इदरकसाएहिं विरहिदा जाणे ।

कुमदिकुसुदे ण विज्जदि हारदुगं होंति पणवण्णा ॥४६॥

अन्वयार्थ : मानादि तीनों कषायों में भी इसी प्रकार से इतर कषायों से रहित समझो ।

कुमति, कुश्रुत में आहारकद्विक न होने से ५५ आस्रव हैं ॥४६॥

वेभंगे वावण्णा कमणमिस्सदुगहारदुगहीणा ।

णाणतिये अडदालं पणमिच्छाचारिअणरहिदा ॥४७॥

अन्वयार्थ : विभंग अवधिज्ञान में आहारकद्विक, वैक्रियकमिश्र, औदारिकमिश्र और कार्मण, ये पाँच आस्रव न होने से ५२ होते हैं । मति, श्रुत, अवधिज्ञान में पाँच मिथ्यात्व और चार अनंतानुबंधी से रहित ४८ आस्रव होते हैं ॥४७॥

मणपज्जे संढित्थीवज्जिदसगणोकसाय संजलणं ।

आदि मणवजोगजुदा पच्चयवीसं मुणेयव्वा ॥४८॥

अन्वयार्थ : मन:पर्यय ज्ञान में हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध,मान, माया, लोभ, चार मनोयोग, चार वचनयोग, औदारिक योग ये २० आस्रव होते हैं । स्त्रीवेद, नपुंसक वेद में मन:पर्ययज्ञान नहीं होता है ॥४८॥

ओरालं तंमिस्सं कम्मइयं सच्चअणुभयाणं च ।

मणवयणाण चउक्के केवलणाणे सगं जाणे ॥४९॥

अन्वयार्थ : केवलज्ञान में औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मण, सत्य मनोयोग, अनुभय मनोयोग, सत्यवचनयोग, अनुभयवचनयोग ये सात आस्रव होते हैं |

मन:पर्ययज्ञान में छठे से बारहवें गुणस्थान तक एवं केवलज्ञान में सयोगी, अयोगी होते हैं ।

केवलज्ञान में सयोगी के ७ योग हैं एवं इसी के अंत में व्युच्छित्ति होकर अयोगी योगरहित होते हैं ॥४९॥

संयम मार्गणा

अडमणवयणोरालं हारदुगं णोकसाय संजलणं ।

सामाइयछेदेसु य चउवीसा पच्चया होंति ॥५०॥

अन्वयार्थ : सामायिक, छेदोपस्थापना चारित्र में चार मनोयोग, चार वचनयोग, औदारिक योग, आहारकद्विक, नव नोकषाय, चार संज्वलन ऐसे २४ आस्रव होते हैं ॥५०॥

विंसदि परिहारे संढित्थीहारदुगवज्जिया एदे ।

सुहुमे णवआदिमजोगा संजलणलोहजुदा ॥५१॥

अन्वयार्थ : परिहारविशुद्धि संयम में नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, आहारकद्विक से रहित २० आस्रव होते हैं । सूक्ष्मसांपराय में आदि के नौ योग, संज्वलन लोभ ये १० आस्रव होते हैं ॥५१॥

एदे पुण जहखादे कम्मणओरालमिस्ससंजुत्ता ।

संजलणलोहहीणा एगादसपच्चया णेया ॥५२॥

अन्वयार्थ : यथाख्यात चारित्र में औदारिक मिश्र और कार्मण से सहित एवं संज्वलन लोभ से रहित १०□२·१२, १२-१·११ आस्रव होते हैं ॥५२॥

तसऽसंजमवज्जिता सेसऽजमा णोकसाय देसजमे ।

अट्ठंतिल्लकसाया आदिमणवजोग सगतीसा ॥५३॥

अन्वयार्थ : देशसंयम में त्रसवध से रहित ११ अविरति, नव नोकषाय और प्रत्याख्यान, संज्वलन की ८ कषाय आदि के नव योग ये ३७ आस्रव होते हैं ॥५३॥

आहारयदुगरहिया पणवण्ण असंजमे दु चक्खुदुगे ।
सव्वे णाणतिकहिदा अडदाला ओहिदंसणे णेया ॥५४॥

अन्वयार्थ : असंयम में आहारकद्विक से रहित ५५ आस्रव होते हैं ॥५४॥

दर्शन मार्गणा एवं लेश्या मार्गणा

सगजोगपच्चया खलु केवलणाणव्व केवलालोए ।
किण्हतिए पणवण्णं हारदुगं वज्जिऊण हवे ॥५५॥

अन्वयार्थ : केवलदर्शन में केवलज्ञानवत् सात योगजन्य आस्रव होता है ।

किण्हदुसाणे वेगुव्वियमिस्सछिदी हवेइ तेउतिए ।
मिच्छदुठाणे ओरालियमिस्सो णत्थि अविरदे अत्थि ॥५६॥

अन्वयार्थ : कृष्ण, नील लेश्या में सासादन गुणस्थान में वैक्रियकमिश्र की व्युच्छित्ति होती है । पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या में मिथ्यात्व, सासादन गुणस्थान में औदारिक मिश्र नहीं है और चौथे गुणस्थान में है ॥५६॥

भव्य मार्गणा

सुहलेस्सतिये भव्वे सव्वेऽभव्वे ण होदि हारदुगं ।
पणवण्णुवसमसम्मे ते मिच्छोरालमिस्सअणरहिदा ॥५७॥

अन्वयार्थ : शुभ तीन लेश्याओं में सभी भाव हैं । भव्य जीवों के सभी भाव होते हैं । अभव्य जीवों में आहारकद्विक रहित ५५ भाव होते हैं । इनमें पूर्वोक्त कोष्ठक रचना समझना ।

सम्यक्त्व मार्गणा

एदे वेदगखइए हारदुओरालमिस्ससंजुत्ता ।
मिच्छे सासण मिस्से सगगुणठाणव्व णायव्वा ॥५८॥

अन्वयार्थ : उपशम सम्यक्त्व में ५ मिथ्यात्व, औदारिकमिश्र, अनंतानुबंधीचतुष्क, आहारकद्विक इन १२ आस्रवों को घटा देने से ४५ आस्रव रहते हैं । गुणस्थान चौथे से ग्यारहवें तक होते हैं |

वेदक और क्षायिक सम्यक्त्व में उपर्युक्त ४५ में आहारकद्विक और औदारिक मिश्र मिलाकर ४८ आस्रव होते हैं । वेदक सम्यक्त्व चौथे से सातवें तक रहता है । मिथ्यात्व, सासादन एवं मिश्र में अपने-अपने गुणस्थान के
समान व्यवस्था समझना ॥५८॥

मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र में गुणस्थानवत् रचना है । क्षायिक सम्यक्त्व में गुणस्थानवत् रचना है, चौथे से चौदह तक गुणस्थान पाये जाते हैं ।

संज्ञी मार्गणा

सण्णिस्स होंति सयला वेगुव्वाहारदुगमसण्णिस्स ।
चदुमणमादितिवयणं अणिंदियं णत्थि पणदाला ॥५९॥

अन्वयार्थ : संज्ञी जीवों में संपूर्ण आस्रव होते हैं । असंज्ञी जीवों में आहारकद्विक, वैक्रियकद्विक, चार मनोयोग, सत्यवचन योग, असत्यवचनयोग, उभयवचनयोग, मननिमित्तक अविरति ये १२ आस्रव नहीं होते हैं ॥५९॥

संज्ञी जीवों में गुणस्थान १२ होते हैं अत: गुणस्थानवत् रचना समझना ।

असैनी में दो गुणस्थान होते हैं ।

आहारक मार्गणा

कम्मइयं वज्जित्ता छपण्णासा हवंति आहारे ।

तेदाला णाहारे कम्मइयरजोगपरिहीणा ॥६०॥

अन्वयार्थ : आहारक अवस्था में कार्मण योग को छोड़कर ५६ आस्रव होते हैं । अनाहारक अवस्था में कार्मणयोग के सिवाय चौदह योगों से रहित ४३ आस्रव होते हैं । आहारक में पहले से लेकर तेरह तक गुणस्थान होते हैं । अनाहारक में प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और सयोगी ये गुणस्थान होते हैं ॥६०॥

इदि मग्गणासु जोगो पच्चयभेदो मया समासेण ।

कहिदो सुदमुणिणा जो भावइ सो जाइ अप्पसुहं ॥६१॥

अन्वयार्थ : इस प्रकार से मार्गणाओं में योग्य आस्रव के भेदों को मुझ श्रुतमुनि ने संक्षेप से कहा है, जो भव्य जीव पठन, पाठन, मनन करके इसकी भावना करते हैं वे आत्मसुख को प्राप्त कर लेते हैं ॥६१॥

पयकमलजुयलविणमियविणेयजणकयसुपूयमाहप्पो ।

णिज्जियमयणपहावो सो वालिंदो चिरं जयऊ ॥६२॥

अन्वयार्थ : जिनके चरणकमल युगल में विनत हुये, विनेय शिष्यजन जिनकी पूजा माहात्म्य को करते हैं, जिन्होंने कामदेव के प्रभाव को जीत लिया है, ऐसे वे श्री बालचंद्र मुनिराज इस पृथ्वी पर चिरकाल तक जयशील होवें ॥६२॥

इति श्री श्रुतमुनि विरचित आस्रव त्रिभंगी समाप्ता ।

इस प्रकार से मार्गणा में आस्रव त्रिभंगी का प्रकरण पूर्ण हुआ ।